भारतीय बैंक संघ और अन्य

बनाम

भारत संघ व अन्य

(रिट याचिका (सिविल) संख्या 18/2013)

21 अप्रैल, 2014

[न्यायमूर्ति के. एस. राधाकृष्णन और न्यायमूर्ति विक्रमजीत सेन]

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881: धारा138 का उद्देश्य – चर्चा की गई ।

धारा 143 से 147 (जैसा कि अंतःस्थापित किया गया है) लिखित परक्राम्य (संशोधन और विविध प्रावधान) अधिनियम, 2002)- चेक का अनादरण-संक्षिप्त प्रक्रिया- याचिकाकर्ता की प्रतिवेदना है कि अधिनियम की धारा 138 से 142 को लागू करने से अनादरित चेकों से निस्तारण के लिए वांछित परिणाम प्राप्त नहीं हुए हैं। अधिनियम की नई धारा 143 से 147 जोडने के बावजूद भी, देश में विभिन्न मजिस्ट्रेट न्यायालयों द्वारा कोई एकरूप प्रक्रिया का पालन नहीं किया जाता है-अभिर्धारितः संशोधन अधिनियम, 2002 को अक्षरशः और मूलतः लागू किया जाना है।- धारा 143 निर्धारित करती है कि द.प्र.सं. की किसी बात के होते हुए भी, निधियों की अपर्याप्तता आदि के लिए चेक बाउंस से संबंधित परक्राम्य

लिखत अधिनियम के अध्याय 17 में निहित सभी अपराधों की सुनवाई न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा धारा 262 से 265 द.प्र.सं. के प्रावधानों के तहत संक्षिप्त विचारण के लिए प्रक्रिया निर्धारित करने वाली ऐसे विचारणों पर लागू होगी-उच्चतम न्यायालय ने परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 और 147 की व्याख्या करते हुए कुछ दिशा-निर्देश निर्धारित किए ताकि चेक बाउंस मामलों में वादकारियों को मुकदमेबाजी के शुरुआती चरणों के दौरान शमन का विकल्प चुनने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके, ताकि आपराधिक न्याय प्रणाली को कम किया जा सके- कुछ उच्च न्यायालयों ने परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत मामलों के त्वरित निस्तारण के लिए कुछ प्रक्रियाएं निर्धारित की हैं - इसलिए, शीघ्र मामले का प्रसंज्ञान लेने, ईमेल द्वारा नोटिस जारी करना, मामले का तत्काल निस्तारण करना और मामलों के शीघ्र और त्वरित निस्तारण के लिए पुरे देश में चेकों के अनादरण के मामलों की सुनवाई करने वाले आपराधिक न्यायालयों को निर्देश जारी किये गये- दण्ड प्रक्रिया संहिता -धारा 262 से 265 तक

रिट याचिका में, याचिकाकर्ता की प्रतिवेदना है कि अधिनियम की धारा 138 से 142 को लागू करने से अनादरित चेकों से निस्तारण के लिए वांछित परिणाम प्राप्त नहीं हुए हैं और परक्राम्य लिखत (संशोधन और विविध प्रावधान) अधिनियम, 2002 के द्वारा अधिनियम की नई धारा 143 से 147 जोडने के बावजूद भी, देश में विभिन्न मजिस्ट्रेट न्यायालयों द्वारा

कोई एकरूप प्रक्रिया का पालन नहीं किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप जो उद्देश्य के लिए संशोधन सम्मलित किये गये थे, वे प्राप्त नहीं किये गये। याचिकाकर्ता ने परक्राम्य लिखत अधिनियम 1881 की धारा 138 के तहत परिवाद का विचारण करने के लिये सक्षम भारतीय राज्य क्षेत्र के सभी न्यायालयों द्वारा पालना में किये जाने वाले उचित दिशा-निर्देश/निर्देशों को निर्धारण करने की मांग की ताकि अधिनियम की धारा 143 के अधिदेश की अनुपालना सपठित धारा 261 से 265 दंड प्रक्रिया संहिता 1973 (द.प्र.सं.) के उक्त न्यायालयों के समक्ष दायर व लम्बित ऐसे परिवादों पर संक्षिप्त विचारण करना ; दिशा निर्देशों की अनुपालना के लिये परमादेश रिट जारी करना इसलिये अभिनिर्धारित किया और प्रत्यर्थी को परमादेश रिट जारी की वे चैक अनादरण संबंधित मामलों के निस्तारण के लिये आवश्यक नीति व विधायी परिवर्तन अपनाये ताकि अधिनियम की मंशा दिशा-निर्देशों के अनुसार उनका शीघ्र निस्तारण किया जा सके।

रिट याचिका का निस्तारण करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित

1. अधिनियम की धारा 138 की कार्यवाही का उद्देश्य यह है कि चेक का उपयोग व्यक्तियों द्वारा बेईमानी के रूप में नहीं किया जाना चाहिए और जब किसी व्यक्ति द्वारा चेक जारी किया जाता है, तो इसका आदरण किया जाना चाहिए और यदि इसका आदरण नहीं किया जाता है, तो व्यक्ति को

नोटिस जारी करके चेक राशि का भुगतान करने का अवसर दिया जाता है और यदि वह तब भी भुगतान नहीं करता है तो उसे आपराधिक मुकदमे और परिणामों का सामना करना होगा। अधिनियम की धारा 138 से 142 में अनादरित चेकों से निपटने में कमी पाई गई थी। उक्त परिस्थितियों में, विधायिका ने परक्राम्य लिखत (संशोधन और प्रकीर्ण प्रावधान) अधिनियम, 2002 द्वारा नई धाराएं 143 से 147 तक सम्मिलित की, जिसे 6 फरवरी, 2003 से लागू किया गया है। [पैरा 6,9]

इलेक्ट्रानिक्स ट्रेड एंड टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट निगम लिमिटेड, सिकंदराबाद बनाम भारतीय प्रौद्योगिकीविद और इंजीनियर्स (इलेक्ट्रॉनिक्स) (प्रा.) लिमिटेड और अन्य (1996) 2 एस.सी.सी. 739: 1996 (1) एस.सी.आर. 843; गोवा प्लास्टिक (प्रा.) लिमिटेड बनाम चिको उर्सुला डिसूजा (2004) 2 एस.सी.सी. 235: 2003 (5) पूरक एस.सी.आर. 835; राधे श्याम गर्ग बनाम नरेश कुमार गुप्ता (2009) 13 एस.सी.सी. 201: 2009 (7) एस.सी.आर. 506-निर्भर।

2. धारा 143 न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 262 से 265 के प्रावधानों के अनुसार सरसरी तौर पर चेक अनादरण के मामलों की सुनवाई करने का अधिकार देती है। अधिनियम की धारा 145 शपथ पत्र पर साक्ष्य से संबंधित है। मांडवी सहकारी बैंक लिमिटेड बनाम निमेश बी ठाकोर (2010) 3 एससीसी 83 में धारा 145 का दायरा इस न्यायालय के

समक्ष विचार के लिए आया था, और इसे उस फैसले में समझाया गया था, जिसमें कहा गया था कि विधायिका ने परिवादी को शपथ पत्र पर अपना साक्ष्य देने का प्रावधान किया, लेकिन अभियुक्त के लिए यह प्रदान नहीं किया। न्यायालय ने कहा कि भले ही विधायिका ने अपने विवेक से धारा 145 (1) में "परिवादी" शब्द के साथ "अभियुक्त" शब्द को शामिल करना उचित नहीं समझा, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि मजिस्ट्रेट परिवादी को शपथ पत्र पर अपना सबूत देने की अनुमति नहीं दे सकता है, जब तक कि इस तरह की अनुमति से इनकार करने के लिए उचित और उचित आधार न हो। धारा 145 (1) परिवादी को शपथ पत्र के माध्यम से या मौखिक साक्ष्य के माध्यम से अपना साक्ष्य देने की पूर्ण स्वतंत्रता देती है। न्यायालय को इसे स्वीकार करना होगा, भले ही यह एक शपथ पत्र के माध्यम से दिया गया हो। धारा 145 (1) के दूसरे भाग में प्रावधान है कि शपथ पत्र पर परिवादी के कथन, सभी अपवादों के अधीन, किसी भी पूछताछ, परीक्षण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में पढ़ा जा सकता है। धारा 145 प्रक्रिया का एक नियम है जो परिवादी के साक्ष्य को लेखबद्व करने के तरीके को निर्धारित करता है और एक बार जब न्यायालय समन जारी करती है और अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित हो जाती है, तो अभियुक्त को एक विकल्प दिया जाता है कि क्या, उस स्तर पर, वह उचित ब्याज के साथ देय राशि का संदाय करने के लिए तैयार होगा और यदि अभियुक्त संदाय करने के लिए तैयार नहीं है, न्यायालय शीघ्र मामले की

सुनवाई तय कर सकती है और दिन-प्रतिदिन की सुनवाई सुनिश्चित कर सकती है। [पैरा 11, 12, 14, 15]

* मांडवी सहकारी बैंक लिमिटेड बनाम निमेश बी. ठाकुर (2010) 3 एस. सी. सी. 83: 2010 (1) एस. सी. आर. 219-- पर निर्भर था।

3. अधिनियम की धारा 145 के तहत, परिवादी द्वारा दिया गया शपथ पत्र को न्यायालय में किसी भी जांच, परीक्षण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में पढ़ा जाएगा, जो यह स्पष्ट करता है कि परिवादी को दो बार स्वयं की जांच करने की आवश्यकता नहीं है यानी एक परिवाद दर्ज करने के बाद और एक अभियुक्त को तलब करने के बाद। अपराध का संज्ञान लेने के लिए परिवादी द्वारा परिवादी के साथ प्रस्तुत शपथ पत्र और दस्तावेज दोनों चरणों यानी पूर्व-समन चरण और पश्चात समन चरण में साक्ष्य में पढ़े जाने के लिए पर्याप्त हैं। दूसरे शब्दों में, अभियुक्त को तलब करने के बाद परिवाद को वापस लेने और फिर से जांच करने की कोई आवश्यकता नहीं है, जब तक कि मजिस्ट्रेट एक विशिष्ट आदेश पारित नहीं करता है कि परिवादी को क्यों वापस बुलाया जाना है। इस तरह का आदेश अभियुक्त द्वारा किए गए आवेदन पर या न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 145(2) के तहत पारित किया जाना है। सारांश मुकदमे में, अभियुक्त को तलब किए जाने के बाद, उसकी याचिका द.प्र.सं. की धारा 263 (छ) के तहत दर्ज की जानी है और उसकी जांच, यदि कोई हो, एक मजिस्ट्रेट

द्वारा की जा सकती है और द.प्र.सं. की धारा 263 (ज) के तहत अदालत द्वारा निष्कर्ष दिया जा सकता है और धारा 138 के तहत अपराध के बाद से चेक के अनादर के अपराध के लिए मजिस्ट्रेट द्वारा उसी प्रक्रिया का पालन किया जा सकता है। अधिनियम की धारा एक दस्तावेज आधारित अपराध है। हम यह स्पष्ट करते हैं कि यदि अधिनियम की धारा 138 के परंतुक (क), (ख) और (ग) का अनुपालन किया गया है, तो तकनीकी रूप से अपराध पूरा हो गया है और यह अभियुक्त को दर्शित करना है कि विशिष्ट कारणों और बचाव के लिए उसके द्वारा कोई अपराध नहीं किया जा सकता है। [पैरा 16]

नितिनभाई सावंतीलाल शाह और अन्य बनाम मनुभाई मांजिभाई पांचाल और अन्य (2011) 9 एस.सी.सी. 638: 2011 (10) एस.सी.आर. 804 पर भरोसा किया। -

4. संशोधन अधिनियम, 2002 को अक्षरशः और मूलतः लागू किया जाना है। अधिनियम की धारा 143, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, उक्त अधिनियम द्वारा अंतस्थापित की गई है जिसमें कहा गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता में निहित किसी भी बात के बावजूद, निधियों की अपर्याप्तता आदि के लिए चेक बाउंस से संबंधित परक्राम्य लिखत अधिनियम के अध्याय 17 में निहित सभी अपराधों की सुनवाई न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा की जाएगी और धारा 262 से 265 के प्रावधानों के तहत

विचारण किया जाएगा। संक्षिप्त विचारण के लिए प्रक्रिया निर्धारित करने वाली द.प्र.सं. ऐसे विचारणों पर लागू होगी और मजिस्ट्रेट के लिए एक वर्ष से अधिक की अवधि के कारावास की सजा और 5,000/- रुपये से अधिक के जुर्माने की सजा पारित करना विधिसम्मत होगा और यह भी प्रावधान किया गया है कि संक्षिप्त विचारण के दौरान, यदि मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि मामले की प्रकृति के लिए एक वर्ष से अधिक कारावास की सजा पारित करने की आवश्यकता है, मजिस्ट्रेट पक्षों को सुनने के बाद, इस आशय का एक आदेश अभिलेखित करता है और उसके बाद किसी भी साक्षी को वापस बुलाता है और दण्ड प्रक्रिया संहिता में प्रदान किए गए तरीके से मामले की सुनवाई या पुन: सुनवाई के लिए आगे बढ़ता है। **दामोदर के मामले में परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 और 147 की व्याख्या करते हुए कुछ दिशा-निर्देश निर्धारित किए ताकि चेक अनादरण मामलों में वादकारियों को मुकदमेबाजी के शुरुआती चरणों के दौरान शमन का विकल्प चुनने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके, ताकि आपराधिक न्याय प्रणाली को कम किया जा सके। और एक ही लेन-देन से संबंधित कई न्यायालयों में परिवादों को दर्ज करने के नियंत्रण के लिए, जिसे परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत मामलों से निपटने के दौरान मजिस्ट्रेट द्वारा भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। [पैरा 18,19]

** दामोदर एस. प्रभु बनाम सैयद बाबालाल एच. (2010) 5 एस.सी.सी 663 : 2010 (5) एस.सी.आर. 678; केएसएल एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम मन्नालाल खंडेलवाल कार्यालय और सरकारी प्लीडर के माध्यम से महाराष्ट्र राज्य(2005) सी.आर.आई.एल.जे. 1201; भारत इंटरनेशनल लिमिटेड और एन. आर. वी. महाराष्ट्र राज्य और अन्य (2005) 44 सिविल सी.सी. (बॉम्बे); हरिश्चंद्र बियानी बनाम स्टॉक होल्डिंग कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (2006) 4 एम.एच.एल.जे. 381; मैग्मा लीजिंग लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य (2007) 3 सी.एच.एन. 574; राजेश अग्रवाल बनाम राज्य और अन्य (2010) आई.एल.आर. 6 दिल्ली 610 पर भरोसा किया।

5. निर्देशः सम्पूर्ण देश में जो आपराधिक न्यायालय अधिनियम धारा 138 के तहत मामलों की सुनवाई करते है उसके लिएनिर्देश जारी किये गये हैं।महानगर मजिस्ट्रेट/न्यायिक मजिस्ट्रेट (एमएम/जेएम), जिस दिन अधिनियम की धारा 138 के तहत परिवाद प्रस्तुत किया जाता है, परिवाद की जांच करेंगे और यदि परिवाद के साथ शपथ पत्र दिया गया है, और शपथ पत्र और दस्तावेज, यदि कोई हों, सही पाए जाते हैं, तो संज्ञान लें और समन जारी करने का निर्देश दें। एमएम/जेएम को समन जारी करते समय व्यावहारिक और यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। समन को उचित रूप से संबोधित किया जाना चाहिए और डाक के साथ-साथ परिवादी से प्राप्त ई-मेल पते द्वारा भेजा जाना चाहिए। न्यायालय, उपयुक्त मामलों में,

अभियुक्त को नोटिस देने के लिए पुलिस या पास की न्यायालय की सहायता ले सकता है। उपस्थिति की सूचना के लिए, एक छोटी तारीख तय की जाए। यदि समन बिना तामील किए वापस प्राप्त होता है, तो तत्काल अनुवर्ती कार्रवाई की जाए। न्यायालय समन में यह निदेश दे सकती है कि यदि अभियुक्त मामले की पहली सुनवाई में अपराधों के शमन के लिए आवेदन करता है और यदि ऐसा आवेदन किया जाता है, तो न्यायालय जल्द से जल्द उचित आदेश पारित कर सकती है। न्यायालय को अभियुक्त को, जब वह जमानत बंधपत्र भरने के लिए उपस्थित होता है, मुकदमे के दौरान अपनी उपस्थिति सुनिश्चित करने का निर्देश देना चाहिए और उसे द.प्र.सं. की धारा 251 के तहत नोटिस लेने के लिए कहना चाहिए ताकि वह बचाव की अपनी याचिका दर्ज कर सके और बचाव पक्ष के साक्ष्य के लिए मामला तय कर सके, जब तक कि अभियुक्त द्वारा धारा 145 (2) के तहत साक्षी को प्रति परीक्षा के लिए फिर से बुलाने के लिए आवेदन नहीं किया जाता है।संबंधित न्यायालय को यह सुनिश्चित करना होगा कि परिवादी की मुख्य परीक्षा, प्रति परीक्षा व पुन: परीक्षा मामला सौंपे जाने के तीन महीने के भीतर की जानी चाहिए। न्यायालय के पास साक्षियों के शपथ पत्रों को स्वीकार करने का विकल्प है, बजाय न्यायालय में उनकी जांच करने के। न्यायालय द्वारा इस आशय का निर्देश दिए जाने पर परिवादी और अभियुक्त के साक्षियों को प्रति परीक्षा के लिए उपलब्ध होना चाहिए। धारा 138 मामलों की सुनवाई करने वाली देश के सभी आपराधिक

न्यायालयों को परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत आने वाले मामलों के त्वरित और शीघ्र निपटान के लिए उपर्युक्त प्रक्रियाओं का पालन करने का निर्देश दिये गये हैं। [पैरा 22]

मामला कानून संदर्भः

1996 (1) एससीआर 843 इस पर भरोसा किया	पैरा 7
2003 (5) पूरक। एस. सी. आर. 835 इस पर भरोसा किया	पैरा 8
2010 (1) एस.सी.आर. 219 इस पर भरोसा किया	पैरा 12
2009 (7) एस.सी.आर. 506 इस पर भरोसा किया	पैरा 13
2011 (10) एस.सी.आर. 804 इस पर भरोसा किया	पैरा 17
2010 (5) एस.सी.आर. 678 इस पर भरोसा किया	पैरा 19
(2005) क्रि.एल.जे. 1201 इस पर भरोसा किया	पैरा 20
(2005) 44 सिविल सी.सी. (बम्ब.) इस पर भरोसा किया	पैरा 20
(2006) 4 एम.एच.एल.जे 381 इस पर भरोसा किया	पैरा 20
(2007) 3 सी.एच.एन. 574 इस पर भरोसा किया	पैरा 20
(2010) आई.एल.आर. 6 दिल्ली 610 इस पर भरोसा किया	पैरा 20

सिविल मूल क्षैत्राधिकारः रिट याचिका (सिविल) सं 18/2013

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत।

मंजीत सिंह, अजय बंसल, ए.ए.जी., रंजन झा, ललित भसीन, नीना गुप्ता, मुदित शर्मा, वी. मोहना, डी. एस. माहरा, अजय मारवाह, अरुण के. सिन्हा, अविजीत भट्टाचार्य, बालासुब्रमण्यम, के. वी. जगदीशवरन, जी. इंदिरा, यूसुफ (अर्पुथम अरुणा एंड कंपनी के लिए), राकेश कुमार, राजीव कुमार, परधामन सिंह, गौरव यादव, धीरज गुप्ता, कुलदिप सिंह, प्रज्ञान शर्मा, हेशु कैना, रचना श्रीवास्तव, आतिफ सुहरावर्दी, अमित कुमार सिंह (के. एनाटोली के लिए) सेमा), अनिल के. झा, प्रियंका त्यागी, कीर्ति आर. मिश्रा, अपूर्व उपमन्यु, रितु राज विश्वास (गोपाल सिंह के लिए), अपूर्व कुरुप, अनिरुद्ध पी. मयी, चारुदत्त महिंदरकर, वी. जी. प्रगसम, ख. उपस्थित दलों की ओर से नोबिन सिंह, इरशाद अहमद, वी. एन. रघुपति, हेमंतिका वाही।

न्यायालय का निर्णय न्यायामूर्ति के. एस. राधाकृष्णन द्वारा दिया गया

न्या० के. एस. राधाकृष्णन 1. भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस रिट याचिका को पंजाब नेशनल बैंक और एक अन्य के साथ भारतीय बैंक संघ (आईबीए) द्वारा प्राथमिकता दी गई है, जिसमें निम्नलिखित राहत की मांग की गई है: –

(क) परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 (अधिनियम) की धारा 138 के तहत परिवाद का विचारण करने के लिए सक्षम भारत के राज्यक्षेत्र के

भीतर सभी न्यायालयों द्वारा पालना में किये जाने वाले उचित दिशा-निर्देश/निर्देशों को निर्धारण करना ताकि अधिनियम की धारा 143 के अधिदेश की अनुपालना सपठित धारा 261 से 265 दंड प्रक्रिया संहिता 1973 (द.प्र.सं.) के उक्त न्यायालयों के समक्ष दायर व लम्बित ऐसे परिवादों पर संक्षिप्त विचारण करना।

(ख) इस माननीय न्यायालय के दिशा-निर्देशों के अनुपालन के लिए परमादेश रिट जारी करना जिसमें उक्त अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत परिवादों के संक्षिप्त विचारण के लिए अपनाए जाने वाले विभिन्न कदमों का उल्लेख हो और इस माननीय न्यायालय को रिपोर्ट दी जाए।

(ग) प्रत्यर्थियों को निर्देश देते हुए परमादेश रिट जारी करें कि वे चेक के अनादर से संबंधित मामलों से निपटने के लिए आवश्यक नीति और विधायी परिवर्तन अपनाएं ताकि अधिनियम की मंशा और इस माननीय न्यायालय द्वारा निर्धारित दिशा-निर्देशों के अनुसार उनका शीघ्र निस्तारण किया जा सके।

2. प्रथम याचिकाकर्ता, जो 174 बैंकों / वित्तीय संस्थानों के साथ व्यक्तियों का एक संघ है, बैंकों का एक स्वैच्छिक संघ है और पूरे बैंकिंग उद्योग के लिए चिंता के मामलों में बैंकों के लिए प्रबुद्ध मंडल के रूप में कार्य करता है। याचिकाकर्ताओं का कहना है कि इस मामले में उठाया गया मुद्दा इस कारण से काफी राष्ट्रीय महत्व का है कि वैश्वीकरण और तेजी से

तकनीकी विकास के युग में, वित्तीय विश्वास और वाणिज्यिक हित को बहाल किया जाना है।

3. याचिकाकर्ताओं का कहना है कि देरी के कारण बैंकिंग उद्योग को काफी नुकसान हुआ। परक्राम्य लिखत अधिनियम से संबंधित मामलों का निपटारा करना। याचिकाकर्ता बैंक सार्वजनिक धन के संरक्षक होने के नाते इसे सार्वजनिक निधि की बड़ी राशि की शीघ्रता से वसूली करना मुश्किल हो जाता है जो धारा 138 परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 के तहत लंबित मामलों में अवरुद्ध हैं। याचिकाकर्ताओं का कहना है कि इस तथ्य के बावजूद, परक्राम्य लिखत अधिनियम अध्याय 14 जो पेश किया गया है। बैंकिंग, सार्वजनिक, वित्तीय संस्थान और परक्राम्य लिखत कानून (संशोधन) अधिनियम, 1988 की धारा 4 द्वारा, की स्वीकार्यता बढ़ाने के लिए लेखीवाल को उत्तरदायी बनाकर देयता के निपटान में चेक अपर्याप्तता के कारण चेक बाउंस के मामले में दंड के लिए निधियों का, संशोधन अधिनियम का वांछित उद्देश्य हासिल नहीं किया है।

4. विधायिका ने देखा है कि अधिनियम की धारा 138 से 142 को लागू करने से अनादरित चेकों से निस्तारण के लिए वांछित वांछित परिणाम प्राप्त नहीं हुए है, यद्यपि लिखित परक्राम्य (संशोधन और विविध) अधिनियम 2002 की नई धारा 143 से 143 प परक्राम्य लिखत अधिनियम जोडने के बावजूद, संक्षिप्त सुनवाई के माध्यम से चेक के

अपमान से संबंधित मामलों के त्वरित निपटान के साथ-साथ अपराध करने के लिए शमनीय। लेकिन जिसके बाद देश के विभिन्न मजिस्ट्रेट न्यायालय, कोई एकरूपता नहीं देखी गई है। जिनके परिणामस्वरूप, जिस उद्देश्य और उद्देश्य के लिए संशोधनों को शामिल किये गये थे, वह प्राप्त नहीं हुआ।

5. चेक, हालांकि विनिमय पत्र के रूप में स्वीकार किया गया परक्राम्य लिखत अधिनियम के तहत और धन के भुगतान के बदले में आसानी से स्वीकार किया जाता है और परक्राम्य है, तथ्य बना रहता है कि एक परक्राम्य के रूप में प्रस्तुति पर आदरण नहीं किये जने से चैक अपनी विश्वसनीयता खाेने लगता है। जैसा कि पहले ही संकेत दिया जा चुका है, अध्याय 17 लागू किया गया था ताकि देनदारियों के निपटान में चेक की स्वीकार्यता को बढ़ाया जा सके। विधेयक के साथ संलग्न उद्देश्यों और कारणों का विवरण नए अध्याय के प्रावधानों की व्याख्या इस प्रकार हैः

> " यह खंड [विधेयक का खंड (4)] एक नया अध्याय सम्मिलित करता है। परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 के नए अध्याय 17 में निहित प्रावधानों में यह प्रावधान है कि जहाँ किसी व्यक्ति द्वारा निर्वहन के लिए कोई चेक निकाला गया हो। किसी भी देनदारी को बैंक द्वारा कारण के लिए भुगतान नहीं किया जाता है धन की राशि की अपर्याप्तता

उस खाते का क्रेडिट जिस पर चेक निकाला गया था या इस कारण से कि बैंककारों के साि चैक के लेखीवाल द्वारा खाते के लिये की गई व्यवस्था से अधिक है तथा एेसा चैक के लेखीवाल को यह माना जायेगा कि उसने अपराध किया। उस मामले में, लेखीवाल, बिना उक्त अधिनियम के अन्य प्रावधानों के प्रति प्रतिकूल प्रभाव, कारावास से दंडनीय, जो एक वर्ष तक का हो सकता है, या जुर्माने से जो चेक की राशि दोगुने तक हो सकता है या दोनों के साथ।

प्रावधान यह भी किए गए हैं कि उक्त अपराध का गठन करने के लिए:

(क) ऐसा चेक बैंक को इसके आहरण की तारीख से छह महीने की अवधि के भीतर या इसकी वैधता की अवधि के भीतर, जो भी पहले हो, प्रस्तुत किया जाना चाहिए; और

(ख) ऐसे चेक की वापसी के संबंध में बैंक से सूचना प्राप्त होने के पंद्रह दिनों के भीतर आदाता या धारक को चेक के आदाता को लिखित में नोटिस देकर उक्त धनराशि के भुगतान की मांग करनी चाहिए; और

(ग) ऐसे चेक के आहरणकर्ता को उक्त नोटिस की प्राप्ति के पंद्रह दिनों के भीतर चेक के नियत समय में आदाता या धारक को उक्त राशि का भुगतान करने में विफल होना चाहिए।

यह भी प्रावधान किया गया है कि यह माना जाएगा, जब तक कि इसके तत्प्रतिकुल साबित न हो, कि ऐसे चेक के धारक ने देयता के निर्वहन में चेक प्राप्त किया है। ऐसे अपराध के लिए किसी भी अभियोजन में जिन बचावों की अनुमति दी जा सकती है या नहीं दी जा सकती है, उन्हें भी प्रावधानों को प्रभावी बनाने के लिए प्रदान किया गया है। उक्त नए अध्याय में कंपनियों द्वारा अपराधों से संबंधित सामान्य प्रावधान भी शामिल किए गए हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए कि वास्तविक और ईमानदार बैंक ग्राहकों को परेशान न किया जाए या असुविधा न हो, प्रस्तावित नए अध्याय में पर्याप्त सुरक्षा उपाय भी किए गए हैं। ऐसे सुरक्षा उपाय हैं:

(क) कोई भी न्यायालय ऐसे अपराध का संज्ञान नहीं लेगा, सिवाय आदाता या धारक द्वारा लिखित रूप में की गई परिवाद के, चेक के नियत समय में;

(ख) ऐसी परिवाद उस तारीख के एक महीने के भीतर की गई है जिस दिन वाद हेतुक उत्पन्न होता है; और

(ग) महानगर मजिस्ट्रेट या न्यायिक मजिस्ट्रेट या प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट से निम्नतर का कोई भी न्यायालय ऐसे किसी अपराध का विचारण नहीं करेगा।

6. अधिनियम की धारा 138 की कार्यवाही का उद्देश्य यह है कि चेक का उपयोग व्यक्तियों द्वारा बेईमानी के रूप में नहीं किया जाना चाहिए और जब किसी व्यक्ति द्वारा चेक जारी किया जाता है, तो इसका आदरण किया जाना चाहिए और यदि इसका आदरण नहीं किया जाता है, तो व्यक्ति को नोटिस जारी करके चेक राशि का भुगतान करने का अवसर दिया जाता है और यदि वह अभी भी भुगतान नहीं करता है तो उसे आपराधिक मुकदमे और परिणामों का सामना करना होगा। परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 आसान संदर्भ के लिए नीचे दी गई है: –

138. खाते में अपर्याप्तता निधियों, आदि के कारण चेक का अनादर – जहां किसी व्यक्ति द्वारा किसी ऋण या अन्य दायित्व के पूर्णतः या भागतः उन्मोचन के लिए किसी बैंककार के पास अपने द्वारा रखे गए खाते में से किसी अन्य व्यक्ति को किसी धनराशि के संदाय के लिए लिखा गया कोई चेक बैंक द्वारा संदाय किए बिना या तो इस कारण लौटा दिया जाता है कि उस खाते में जमा धनराशि उस चेक का आदरण करने के लिए

अपर्याप्त है या वह उस रकम से अधिक है जिसका बैंक के साथ किए गए करार द्वारा उस खाते में से संदाय करने का ठहराव किया गया है, वहां ऐसे व्यक्ति के बारे में यह समझा जाएगा कि उसने अपराध किया है और वह, इस अधिनियम के किसी अन्य उपबंध पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी या जुर्माने से, जो चेक की रकम का दुगुना तक हो सकेगा, या दोनों से, दंडनीय होगाः

परन्तु इस धारा में अंतर्विष्ट कोई बात तब तक लागू नहीं होगी जब तक-

(क) वह चेक उसके, लिखे जाने की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर या उसकी विधिमान्यता की अवधि के भीतर जो भी पूर्वतर हो, बैक को प्रस्तुत न किया गया हो;

(ख) चेक का पाने वाला या धारक, सम्यक् अनुक्रम में चेक के लेखीवाल को, असंदत्त चेक के लौटाए जाने की बाबत बैंक से उसे सूचना की प्राप्ति के पन्द्रह दिन के भीतर, लिखित रूप में सूचना देकर उक्त धनराशि के संदाय के लिए मांग नहीं करता है; और

(ग) ऐसे चेक का लेखीवाल, चेक के पाने वाले को या धारक को उक्त सूचना की प्राप्ति के पंद्रह दिन के भीतर उक्त धनराशि का संदाय सम्यक् अनुक्रम में करने में असफल नहीं रहता है।

स्पष्टीकरण- इस धारा के प्रयोजनों के लिए, "ऋण या अन्य दायित्व"से विधितः प्रवर्तनीय ऋण या अन्य दायित्व अभिप्रेत है

7. इलेक्ट्रॉनिक्स ट्रेड एंड टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट कॉरपोरेशन लिमिटेड, सिकंदराबाद बनाम इंडियन टेक्नोलॉजिस्ट एंड इंजीनियर्स (इलेक्ट्रॉनिक्स) (प्रा.) लिमिटेड और एक अन्य (1996) 2 एससीसी 739 मामले में इस अदालत ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गयाः

> "6..... धारा 138 को क़ानून में लाने का उद्देश्य बैंकिंग परिचालनों की प्रभावकारिता और परक्राम्य लिखतों पर व्यापार करने में विश्वसनीयता में विश्वास पैदा करना प्रतीत होता है। सिविल उपचार के बावजूद, धारा 138 का उद्देश्य परक्राम्य लिखत के लेखीवाल की ओर से बेईमानी को रोकना था, जो एक अनुक्रम में उसके द्वारा रखे गए अपने खाते में पर्याप्त धन के बिना चेक खींचता है और आदाता या धारक को इस पर कार्रवाई करने के लिए प्रेरित करता है। धारा 138 के अनुसार यदि कोई व्यक्ति बेईमानी से चेक जारी करता है तो वह अपराध करता है। यह देखा गया है कि एक बार जब आदाता को चेक जारी कर दिया जाता है और आदाता ने चेक प्रस्तुत कर दिया है और उसके बाद, यदि भुगतान न करने के लिए बैंक को कोई निर्देश जारी

किया जाता है और चेक को इस तरह के समर्थन के साथ आदाता को लौटा दिया जाता है, तो यह चेक का अनादर है और यह धारा 138 के अर्थ के भीतर आता है.....

8. गोवा प्लास्ट (प्रा.) लिमिटेड बनाम चिको उर्सुला डिसूजा (2004) 2 एससीसी 235 मामले में, इस न्यायालय ने अधिनियम की धारा 138 और 139 के उद्देश्यों और अवयवों पर विचार करते हुए निम्नानुसार टिप्पणी की: –

"अधिनियम के प्रावधानों, विशेष रूप से, धारा 138 और 139 के तहत उद्देश्य और सामग्री को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावसायिक लेनदेनों, विशेष रूप से, चेक का परक्राम्यों के रूप में उचित और सुचारू संचालन, मुख्य रूप से पक्षकारों की सत्यनिष्ठा और ईमानदारी पर निर्भर करता है। हमारे देश में, बड़ी संख्या में वाणिज्यिक लेन-देन में, यह संज्ञान किया गया था कि चेक केवल एक उपकरण के रूप में जारी किए गए थे, न केवल टालने के लिए बल्कि लेनदारों को धोखा देने के लिए भी। वाणिज्यिक लेन-देन में चेक जारी करने की पवित्रता और विश्वसनीयता काफी हद तक खत्म हो गई थी। निस्संदेह, बैंक द्वारा चेक के अनादर से आदाता को बेहिसाब नुकसान, क्षति और

असुविधा होती है और देश के भीतर और बाहर व्यापार लेनदेन की पूरी विश्वसनीयता को गंभीर झटका लगता है। संसद ने नकद भुगतान के लिए एक भरोसेमंद विकल्प के रूप में चेक की विश्वसनीयता को बहाल करने के लिए उपरोक्त प्रावधानों को अधिनियमित किया। सिविल कोर्ट में उपलब्ध उपचार एक लंबा मामला है और एक बेईमान लेखीवाल आम तौर पर संदाय के वास्तविक दावे को विफल करने के लिए विभिन्न दलीलें देता है।

9. हमने संकेत दिया है कि अधिनियम की धारा 138 से 142 में अनादरित चेकों से निपटने में कमी पाई गई थी। उक्त परिस्थितियों में, विधायिका ने परक्राम्य लिखत (संशोधन और प्रकीर्ण प्रावधान) अधिनियम, 2002 द्वारा नई धाराएं 143 से 147 तक सम्मिलित की, जिसे 6 फरवरी, 2003 से लागू किया गया है। उक्त संशोधन अधिनियम के उद्देश्य और कारण कुछ महत्व के हैं जो निम्नलिखित हैं: –

"1. परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 को बैंकिंग, सार्वजनिक वित्तिय संस्थान एवं परक्राम्य लिखत अधिनियम विधि (संशोधन) अधिनियम,1988 द्वारा संशोधित किया गया था, जिसमें चेक के लेखीवाल के खाते में धन की अपर्याप्तता के कारण चेक बाउंस होने की स्थिति में दंड के लिए एक

नया अध्याय 17 शामिल किया गया था। इन प्रावधानों को चेक के उपयोग की संस्कृति को प्रोत्साहित करने और साधन की विश्वसनीयता बढ़ाने की दृष्टि से शामिल किया गया था। परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 के मौजूदा प्रावधानों मुख्यतः अध्याय 17 की धारा 138 से 142 में चेक अनादर से निस्तारण में कमी पाई गई है। न केवल अधिनियम में प्रदान की गई सजा अपर्याप्त साबित हुई है, बल्कि ऐसे मामलों से निस्तारण के लिए न्यायालयों के लिए निर्धारित प्रक्रिया बोझिल पाई गई है। अधिनियम में निहित प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए न्यायालय ऐसे मामलों को समयबद्ध तरीके से शीघ्र निपटाने में असमर्थ हैं।

2. देश की विभिन्न न्यायालयों में परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 से 142 के तहत बड़ी संख्या में मामले लंबित होने की सूचना है। विभिन्न न्यायालयों में उक्त अधिनियम के अंतर्गत बड़ी संख्या में लंबित परिवादों को ध्यान में रखते हुए परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 की समीक्षा करने और सिफारिशें करने के लिए एक कार्य दल का गठन किया गया था कि उस धारा के उद्देश्य को प्रभावी ढंग से प्राप्त करने के लिए किन परिवर्तनों की आवश्यकता है।

3. विभिन्न संस्थाओं और संगठनों के अन्य प्रतिनिधियों के साथ कार्य दल की सिफारिशों की सरकार द्वारा भारतीय रिजर्व बैंक और अन्य विधिक विशेषज्ञों के परामर्श से जांच की गई और परक्राम्य लिखत (संशोधन) विधेयक, 2001 नामक एक विधेयक 24 जुलाई, 2001 को लोक सभा में पुरस्थापित किया गया। इस विधेयक को वित्त संबंधी स्थायी समिति को भेजा गया था जिसने नवम्बर, 2001 में लोक सभा को प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में कतिपय सिफारिशें की थीं।

4. वित्त एवं अन्य प्रतिनिधित्वों संबंधी स्थायी समिति की सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए अन्य बातों के साथ-साथ परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 में निम्नलिखित संशोधन लाने का निर्णय लिया गया है, अर्थात् :-

(1) अधिनियम के अंतर्गत यथा निर्धारित दण्ड को एक वर्ष से बढ़ाकर दो वर्ष करना;

(2) आदाता द्वारा लेखीवाल को नोटिस जारी करने की अवधि को 15 दिनों से बढ़ाकर 30 दिन करना;

(3) न्यायालय को एक महीने की अवधि को माफ करने के लिए विवेक प्रदान करना, जिसे अधिनियम के

तहत मामले का संज्ञान लेने के लिए निर्धारित किया गया है;

(4) परिवादी के प्रारंभिक साक्ष्य को समाप्त करने के लिए प्रक्रिया निर्धारित करना;

(5) न्यायालय द्वारा अभियुक्त या साक्षी को स्पीड डाक या पैनल में शामिल निजी कूरियर के माध्यम से सम्मन भेजने की प्रक्रिया निर्धारित करना;

(6) मामलों के निस्तारण में तेजी लाने की दृष्टि से अधिनियम के अंतर्गत मामलों के संक्षिप्त विचारण की व्यवस्था करना;

(7) अधिनियम के अधीन अपराधों को शमनीय बनाना;

(8) उन निदेशकों को अधिनियम की धारा 141 के अधीन अभियोजन से छूट देना जो केन्द्र सरकार या राज्य सरकार या केन्द्र सरकार या राज्य सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण वाले किसी वित्तीय निगम, जैसा भी मामला हो, में कोई पद या रोजगार धारण करने के आधार पर किसी कंपनी के निदेशक के रूप में नामित किए जाते हैं;

(9) यह उपबंध करना कि किसी अपराध का विचारण करने वाले मजिस्ट्रेट को एक वर्ष से अधिक अवधि के कारावास और पांच हजार रुपये से अधिक के जुर्माने की सजा देने की शक्ति होगी;

(10) सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 को इलेक्ट्रॉनिक चेकों संबंध में लागू करवाना और कटे हुए चेकों के संबंध में ऐसे संशोधनों लागू करना जिन्हें केन्द्र सरकार भारतीय रिजर्व बैंक के परामर्श से अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा आवश्यक समझती है; और

(11) बैंकर्स बही साक्ष्य अधिनियम, 1891 में दी गई बैंकरों की बहीयों और प्रमाणित प्रतियों की परिभाषाओं में संशोधन करना।

5. अधिनियम में प्रस्तावित संशोधनों का उद्देश्य है -चेक के अपमान से संबंधित मामलों का शीघ्र निपटान, अपराधियों के लिए सजा बढ़ाना, इलेक्ट्रॉनिक शुरू करना इलेक्ट्रॉनिक में एक कटे हुए चेक और एक चेक की छवि प्रपत्र के साथ-साथ एक आधिकारिक नामित निदेशक को

अभियोजन से छूट देना, परक्राम्य लिखतों अधिनियम 1881 के तहत।

6. विधेयक उपर्युक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता है।

10. 2002 के संशोधन द्वारा पेश की गई अधिनियम की धारा 143 निम्नानुसार है: –

143. प्रकरणों का संक्षेपतः विचारण करने की न्यायालय की शक्ति -

(1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुये भी इस अध्याय के अन्तर्गत सभी अपराधों का विचारण न्यायिक मजिस्ट्रेट या महानगर मजिस्ट्रेट के द्वारा किया जायेगा व जहां तक हो सके कथित संहिता के अधारा 262 से 265 के उपबंधों का (दोनों सम्मिलित रूप में) ऐसे विारण पर प्रवृत होगा

परन्तुक इस संहिता के अधीन संक्षिप्तः विचारण में मजिस्ट्रेट के लिये यह विधिक होगा, कि किसी दोषसिद्धि के प्रकरण में एक साल की सजा पारित करने के लिये एवं जुर्माना की राशि पांच हजार रूपयाः

परन्तुक यह और कि जब प्रारंभ होने पर संक्षिप्तः विचाारण के दौरान इस धार के अन्तर्गत मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है, कि प्रकरण का स्वभाव ऐसा है, कि प्रकरण या संक्षिप्तः विचारण अवांछनीय है, एक वर्ष से अनाधिक के कारावास की सजा पारित किये जाने के योग्य है,

अथवा अन्य कोई कारण है, प्रकरण में मजिस्ट्रेट पक्षों को सुनने के पश्चात उसके प्रभाव के लिये आदेश अभिलिखित कर एवं तत्पश्चात किसी साक्षी को पुनः आहूत करता है, जिसे परीक्षित किया गया है, तथा सुनवाई या पुनः सुनवाई के लिये अग्रसर होता है, जैसा कि कथित संहिता के द्वारा उपबंधित है।

(2) इस धारा के अधीन स्थायी तौर पर न्याय के हित में प्रकरण का विचारण जहां तक व्यपहार्य है, जब तक उसका निष्कर्ष न हो, दिन प्रतिदिन होगा। न्यायालय प्रकरण का विचारण अगला दिन से परे के लिये स्थगन आवश्यक है, तो लिखित तौर पर ऐसे कारण को अभिलिखित करेगा।

(3) इस धारा के अंतर्गत प्रत्येक विचारण यथासंभव यथाशीघ्र नियमित होगा एवं परिवाद प्रस्तुत करने की तिथि से छः माह के अंदर विचारण का निष्कर्ष के लिये प्रयास किया जायेगा।

11. अधिनियम की धारा 145 शपथ पत्र पर साक्ष्य से संबंधित है और निम्नानुसार है:

"145. शपथ पत्र पर साक्ष्य-

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुये भी परिवादी का साक्ष्य उसके द्वारा शपथ पत्र दिया जा सकता है एवं समस्त न्यायसंगत अपवादों के

अध्यधीन रहते हुये कथित संहिता के अन्तर्गत किसी जांच, विचारण या अन्य किसी कार्यवाही में साक्ष्य में पढ़ा जा सकता है।

(2) न्यायालय यदि उचित समझता है, अभियोजन या अभियुक्त के आवेदन-पत्र पर, किसी व्यक्ति को सम्मन कर सकता है एवं परीक्षण करेगा, जिस व्यक्ति के द्वारा शपथ पत्र पर दिये गये साक्ष्य तथ्यों के रूप में उसमें अन्तर्विष्ट है।"

12. मांडवी सहकारी बैंक लिमिटेड बनाम निमेश बी. ठाकोर (2010) 3 एस.सी.सी. 83 में धारा 145 का दायरा इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आया था, और इसे उस फैसले में समझाया गया था, जिसमें कहा गया था कि विधायिका ने परिवादी को शपथ पत्र पर अपना साक्ष्य देने का प्रावधान किया, लेकिन अभियुक्त के लिए यह प्रदान नहीं किया। न्यायालय ने कहा कि भले ही विधायिका ने अपने विवेक से धारा 145 (1) में "परिवादी" शब्द के साथ "अभियुक्त" शब्द को शामिल करना उचित नहीं समझा, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि मजिस्ट्रेट परिवादी को शपथ पत्र पर अपनी साक्ष्य देने की अनुमति नहीं दे सकता है, जब तक कि इस तरह की अनुमति से इनकार करने के लिए उचित और उचित आधार न हो।

13. इस न्यायालय ने राधेश्याम गर्ग बनाम नरेश कुमार गुप्ता (2009) 13 एस.सी.सी. 201 में धारा 145 के दायरे की जांच करते हुए निम्नानुसार निर्णय लिया: –

> "यदि अधिनियम की धारा 145 के प्रावधानों के संदर्भ में एक शपथ पत्र को एक साक्ष्य माना जाता है, तो यह समझना मुश्किल है कि न्यायालय उक्त शपथ पत्र के अभिसाक्षी को एक बार फिर से इसकी सामग्री के संबंध में खुद की जांच करने के लिए क्यों कहेगी। उससे प्रतिपरीक्षा की जा सकती है और उसके साक्ष्य पूरे होने पर उससे फिर से पूछताछ की जा सकती है। इस प्रकार, शब्द "इसमें निहित तथ्यों के रूप में शपथ पत्र पर साक्ष्य देने वाले किसी भी व्यक्ति की जांच करें, यदि अधिनियम की धारा 145 की उप-धारा (2) के संदर्भ में न्यायालय द्वारा अभिसाक्षी को तलब किया जाता है, हमारी राय में, प्रति परीक्षा के उद्देश्य से होगा। यह प्रावधान एक लाभकारी उद्देश्य को पूरा करने का प्रयास करता है।

14. परिवादी की साक्ष्य दर्ज करने के लिए आमतौर पर काफी समय व्यतीत किया जाता है। प्रश्न यह है कि क्या न्यायालय परिवादी की उपस्थिति को छूट दे सकती है, इसके बजाय, परिवादी के शपथ पत्र को

स्वीकार करने के लिए कदम उठा सकती है और उसे मुख्य परीक्षा के रूप में मान सकती है। धारा 145 (1) परिवादी को शपथ पत्र के माध्यम से या मौखिक साक्ष्य के माध्यम से अपना साक्ष्य देने की पूर्ण स्वतंत्रता देती है। न्यायालय को इसे स्वीकार करना होगा, भले ही यह एक शपथ पत्र के माध्यम से दिया गया हो। धारा 145 (1) के दूसरे भाग में प्रावधान है कि शपथ पत्र पर परिवादी के कथन, सभी अपवादों के अधीन, किसी भी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में पढ़ा जा सकता है। धारा 145 प्रक्रिया का एक नियम है जो परिवादी के साक्ष्य को लेखबद्व करने के तरीके को निर्धारित करता है और एक बार जब न्यायालय समन जारी करती है और अभियुक्त की उपस्थिति सुनिश्चित हो जाती है, तो अभियुक्त को एक विकल्प दिया जाता है कि क्या, उस स्तर पर, वह उचित ब्याज के साथ देय राशि का संदाय करने के लिए तैयार होगा और यदि अभियुक्त संदाय करने के लिए तैयार नहीं है, न्यायालय शीघ्र मामले की सुनवाई तय कर सकती है और दिन-प्रतिदिन की सुनवाई सुनिश्चित कर सकती है।

15. धारा 143 न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 262 से 265 के प्रावधानों के अनुसार संक्षिप्त तौर पर चेक अनादरण के मामलों की सुनवाई करने का अधिकार देती है। धारा 262 से 264 के प्रासंगिक प्रावधान आसान संदर्भ के लिए निम्न दिए गए हैं:

"262. संक्षिप्त विचारण की प्रक्रिया -

(1)इस अध्याय के अधीन विचारणों में इसके पश्चात इसमें जैस वर्णित है, उसके सिवाय, इस संहिता में समन मामलों के विचारण के लिये विनिर्दिष्ट प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा।

(2) तीन मास से अधिक की अवधि के लिये कारावास का कोई दंडादेश इस अध्याय के अधीन किसी दोषसिद्धि के मामलों में न दिया जाएगा।

263. संक्षिप्त विचारणों में अभिलेख –

संक्षेपतः विचारित प्रत्येक मामले में मजिस्ट्रेट ऐसे प्ररूप में, जैसा राज्य सरकार निर्दिष्ट करे, निम्नालिखित विशिष्टियां प्रविष्ट करेगा, अर्थात -

(क) मामले का क्रम संख्यांक,

(ख) अपराध किये जाने की तारीख,

(ग) रिपोर्ट या परिवाद की तारीख,

(घ) परिवादी का (यदि कोई हो) नाम,

(ड.) अभियुक्त का नाम, उसके माता-पिता का नाम और उसका निवास,

(च) वह अपराध जिसका परिवाद किया गया है और वह अपराध जो साबित हुआ है (यदि कोई हो), और धारा 260 की उपधारा (1) के खंड (2), खंड (3) या खंड (4) के अधीन आने वाले मामलों में उस सम्पति का मूल्य, जिसके बारे में अपराध किया गया है,

(छ) अभियुक्त का अभिवाक और उसकी परीक्षा (यदि कोई हो),

(ज) निष्कर्ष,

(झ) दंडादेश या अन्य अंतिम आदेश,

(ञ) कार्यवाही समाप्त होने की तारीख।

264. संक्षेपतः विचारित मामलों में निर्णय –

संक्षेपतः विचारित प्रत्येक ऐसे मामले में, जिसमें अभियुक्त दोषी होने का निर्दिष्ट अभिवचन नहीं करता है, मजिस्ट्रेट साक्ष्य का सारांश और निष्कर्ष के कारणों का संक्षिप्त कथन देते हुए निर्णिय अभिलिखित करेगा।

16. हमने प्रकट दिया है कि अधिनियम की धारा 145 के तहत, परिवादी एक शपथ पत्र के माध्यम से अपना साक्ष्य दे सकता है और इस तरह के शपथ पत्र को न्यायालय में किसी भी जांच, विचारण या अन्य कार्यवाही में साक्ष्य के रूप में पढ़ा जाएगा, जो यह स्पष्ट करता है कि

परिवादी को दो बार स्वयं की जांच करने की आवश्यकता नहीं है यानी एक परिवाद दर्ज करने के बाद और एक अभियुक्त को तलब करने के बाद। अपराध का संज्ञान लेने के लिए परिवादी द्वारा परिवादी के साथ प्रस्तुत शपथ पत्र और दस्तावेज दोनों चरणों यानी पूर्व-समन चरण और पश्चात समन चरण में साक्ष्य में पढ़े जाने के लिए पर्याप्त हैं। दूसरे शब्दों में, अभियुक्त को तलब करने के बाद परिवाद को वापस लेने और फिर से जांच करने की कोई आवश्यकता नहीं है, जब तक कि मजिस्ट्रेट एक विशिष्ट आदेश पारित नहीं करता है कि परिवादी को क्यों वापस बुलाया जाना है। इस तरह का आदेश अभियुक्त द्वारा किए गए आवेदन पर या न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 145(2) के तहत पारित किया जाना है। सारांश मुकदमे में, अभियुक्त को तलब किए जाने के बाद, उसकी याचिका द.प्र.सं. की धारा 263 के तहत दर्ज की जानी है और उसकी जांच, यदि कोई हो, एक मजिस्ट्रेट द्वारा की जा सकती है और द.प्र.सं. की धारा 263 के तहत अदालत द्वारा निष्कर्ष दिया जा सकता है और धारा 138 के तहत अपराध के बाद से चेक के अनादर के अपराध के लिए मजिस्ट्रेट द्वारा उसी प्रक्रिया का पालन किया जा सकता है। अधिनियम की धारा एक दस्तावेज आधारित अपराध है। हम यह स्पष्ट करते हैं कि यदि अधिनियम की धारा 138 के परंतुक (क), (ख) और (ग) का अनुपालन किया गया है, तो तकनीकी रूप से अपराध पूरा हो गया है और यह अभियुक्त को दर्शित है

कि विशिष्ट कारणों और बचाव के लिए उसके द्वारा कोई अपराध नहीं किया जा सकता है।

17. संक्षिप्त मामले की प्रक्रिया को इस न्यायालय द्वारा नितिनभाई सेवंतीलाल शाह और अन्य बनाम मनुभाई मांजीभाई पांचाल और अन्य (2011) 9 एससीसी 638 में समझाया गया है, जिसमें इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है :

> "12. संहिता के अध्याय 21 में संक्षिप्त विचारणों का प्रावधान किया गया है। संहिता की धारा 260 किसी मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट या किसी महानगर मजिस्ट्रेट या प्रथम श्रेणी के किसी मजिस्ट्रेट को उच्च न्यायालय द्वारा इस संबंध में विशेष रूप से अधिकार प्रदान करने की शक्ति प्रदान करती है कि वह उसमें उल्लिखित सभी या किन्हीं अपराधों का संक्षिप्त रूप में विचारण कर सके। धारा 262 में संक्षिप्त विचारण की प्रक्रिया निर्धारित की गई है और इसकी उपधारा (1) में अन्य बातों के साथ-साथ यह निर्धारित किया गया है कि संक्षिप्त विचारणों में सम्मन मामले के विचारण के लिए संहिता में निर्दिष्ट प्रक्रिया का पालन इस शर्त के अधीन किया जाएगा कि अध्याय के अंतर्गत दोषसिद्धि के मामले में

तीन माह से अधिक की अवधि के कारावास की कोई सजा पारित नहीं की जाएगी।

13. संक्षिप्त विचारण में रिकॉर्ड को किस तरीके से बनाए रखा जाना है, यह संहिता की धारा 263 में बताया गया है। धारा 264 में उल्लेख किया गया है कि संक्षिप्त तौर पर आजमाए गए प्रत्येक मामले में जिसमें अभियुक्त दोषी नहीं है, मजिस्ट्रेट साक्ष्य के सार और एक निर्णय को अभिलिखित करेगा जिसमें निष्कर्ष के कारणों का एक संक्षिप्त विवरण होगा। इस प्रकार, मजिस्ट्रेट से यह अपेक्षा नहीं की जाती है कि वह पूर्ण साक्ष्य लेखबद्ध करे, अन्यथा उसे नियमित विचारण में लेखबद्ध करने की आवश्यकता होती है और उसके निर्णय में निष्कर्ष के कारणों का एक संक्षिप्त विवरण भी होना चाहिए और उन कारणों को विस्तृत नहीं करना चाहिए जो अन्यथा उन्हें नियमित विचारण में लेखबद्ध करने की आवश्यकता होती।

18. संशोधन अधिनियम, 2002 को अक्षरशः और मूलतः लागू किया जाना है। अधिनियम की धारा 143, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया गया है, उक्त अधिनियम द्वारा अंतस्थापित की गई है जिसमें कहा गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता में निहित किसी भी बात के बावजूद, निधियों की

अपर्याप्तता आदि के लिए चेक बाउंस से संबंधित परक्राम्य लिखत अधिनियम के अध्याय 17 में निहित सभी अपराधों की सुनवाई न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा की जाएगी और धारा 262 से 265 के प्रावधानों के तहत विचारण किया जाएगा। संक्षिप्त विचारण के लिए प्रक्रिया निर्धारित करने वाली द.प्र.सं. ऐसे विचारणों पर लागू होगी और मजिस्ट्रेट के लिए एक वर्ष से अधिक की अवधि के कारावास की सजा और 5,000/- रुपये से अधिक के जुर्माने की सजा पारित करना विधिसम्मत होगा और यह भी प्रावधान किया गया है कि संक्षिप्त विचारण के दौरान, यदि मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि मामले की प्रकृति के लिए एक वर्ष से अधिक कारावास की सजा पारित करने की आवश्यकता है, मजिस्ट्रेट, पक्षों को सुनने के बाद, इस आशय का एक आदेश अभिलेखित करता है और उसके बाद किसी भी साक्षी को वापस बुलाता है और दण्ड प्रक्रिया संहिता में प्रदान किए गए तरीके से मामले की सुनवाई या पुन: सुनवाई के लिए आगे बढ़ता है

19. दामोदर एस. प्रभु बनाम सैयद बाबालाल एच. (2010) 5 एस.सी.सी. 663 मामले में इस न्यायालय ने परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 और 147 की व्याख्या करते हुए कुछ दिशा-निर्देश निर्धारित किए ताकि चेक बाउंस मामलों में वादकारियों को मुकदमेबाजी के शुरुआती चरणों के दौरान कंपाउंडिंग का विकल्प चुनने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके, ताकि आपराधिक न्याय प्रणाली को कम किया जा सके। और एक ही लेन-देन से संबंधित कई न्यायालयों में परिवादों को दर्ज करने के नियंत्रण

के लिए, जिसे परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत मामलों से निपटने के दौरान मजिस्ट्रेट द्वारा भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

20. हम देखते हैं कि उन सभी पहलुओं पर विचार करते हुए, देश के कुछ उच्च न्यायालयों ने परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत मामलों के त्वरित निस्तारण के लिए कुछ प्रक्रियाएं निर्धारित की हैं। इस संबंध में, केएसएल एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम मन्नालाल खंडेलवाल और महाराष्ट्र राज्य सरकारी वकील के कार्यालय (2005) क्रिलजे 1201 , इंडो इंटरनेशनल लिमिटेड और अन्य अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य (2005) 44 सिविल सीसी (बॉम्बे), हरिशचंद्र बियानी बनाम स्टॉक होल्डिंग कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (2006) 4 एमएचएलजे 381, बोम्बे उच्च न्यायालय, मैग्मा लीजिंग लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य (2007) 3 सीएचएन 574, कलकत्ता उच्च न्यायालय का निर्णय। राजेश अग्रवाल बनाम राज्य और एक अन्य (2010) आईएलआर 6 दिल्ली 610 दिल्ली उच्च न्यायालय का निर्णय के माध्यम से दिया जा सकता है।

21. हमारे विचार में विभिन्न उच्च न्यायालयों द्वारा दिए गए कई निर्देश परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत मामलों से निपटने वाले पूरे देश में आपराधिक न्यायालयों द्वारा अनुकरण के योग्य हैं , जिसके लिए निम्नलिखित निर्देश दिए जा रहे हैं: -

दिशा-निर्देश:

(1) महानगर मजिस्ट्रेट/न्यायिक मजिस्ट्रेट (एमएम/जेएम), जिस दिन अधिनियम की धारा 138 के तहत परिवाद प्रस्तुत किया जाता है, परिवाद की जांच करेंगे और यदि परिवाद के साथ शपथ पत्र दिया गया है, और शपथ पत्र और दस्तावेज, यदि कोई हों, सही पाए जाते हैं, तो संज्ञान लें और समन जारी करने का निर्देश दें।

(2) एमएम/जेएम को समन जारी करते समय व्यावहारिक और यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। समन को उचित रूप से संबोधित किया जाना चाहिए और डाक के साथ-साथ परिवादी से प्राप्त ई-मेल पते द्वारा भेजा जाना चाहिए। न्यायालय, उपयुक्त मामलों में, अभियुक्त को नोटिस देने के लिए पुलिस या पास की न्यायालय की सहायता ले सकता है। उपस्थिति की सूचना के लिए, एक छोटी तारीख तय की जाए। यदि समन बिना तामील किए वापस प्राप्त होता है, तो तत्काल अनुवर्ती कार्रवाई की जाए।

(3) न्यायालय समन में यह संकेत दे सकती है कि यदि अभियुक्त मामले की पहली सुनवाई में अपराधों के शमन के लिए आवेदन करता है और यदि ऐसा आवेदन किया जाता है, तो अदालत जल्द से जल्द उचित आदेश पारित कर सकती है।

(4) न्यायायल को अभियुक्त को, जब वह जमानत बंधपत्र भरने के लिए उपस्थित होता है, मुकदमे के दौरान अपनी उपस्थिति सुनिश्चित करने

का निर्देश देना चाहिए और उसे द.प्र.सं. की धारा 251 के तहत बताना चाहिए ताकि वह बचाव की अभिवाक दर्ज कर सके और बचाव पक्ष के साक्ष्य के लिए मामला तय कर सके, जब तक कि अभियुक्त द्वारा धारा 145 (2) के तहत साक्षी को प्रति परीक्षा के लिए फिर से बुलाने के लिए आवेदन नहीं किया जाता है।

(5) संबंधित न्यायालय को यह सुनिश्चित करना होगा कि परिवादी की मुख्य परीक्षा, प्रति परीक्षा व पुन: परीक्षा मामला सौंपे जाने के तीन महीने के भीतर की जानी चाहिए। न्यायालय के पास साक्षियों के शपथ पत्रों को जांच करने के बजाय उनको स्वीकार करने का विकल्प है। न्यायालय द्वारा इस आशय का निर्देश दिए जाने पर परिवादी और अभियुक्त के साक्षियों को प्रति परीक्षा के लिए उपलब्ध होना चाहिए।

22. इसलिए, हम धारा 138 मामलों से निपटने वाले देश के सभी आपराधिक न्यायालयों को परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के तहत आने वाले मामलों के त्वरित और शीघ्र निपटान के लिए उपर्युक्त प्रक्रियाओं का पालन करने का निर्देश देते हैं।

23. तदनुसार, रिट याचिका का निस्तारण किया जाता है, जैसा कि ऊपर बताया गया है।

देविका गुजराल

रिट याचिका का निस्तारण किया

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास"की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी श्री रमेश कुमार करोल (आर.जे.एस.) (UID No. RJ 00817) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण – यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमति उपयोग के लयि स्थानीय भाषा में अनवादित किया गया हैँ और किसी अन्य उददेश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उददेश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कायार्न्वयन के उददेश्य से भी अग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।